International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.340, Volume 04, No. 01(I), January - March, 2022, pp.213-218

# कामकाजी महिलायें एवं सामाजिक यथार्थ

मुकेश कुमार सैनी*

**सार**

*भारतीय समाज धर्म प्रधान समाज रहा है, जहाँ कि जीवन का हर पक्ष किसी न किसी रूप में धर्म द्वारा परिभाषित, संचालित एवं नियन्त्रित रहा है। अतः भारतीय संदर्भ में नारी भी अपने विभिन्न रूपों में (पुत्री, पत्नी, माँ आदि में) धर्म से परिबद्ध रही है। नारी की पूर्णतया का प्रमुख आधार विवाह माना गया, जिसे कि भारतीय संस्कृति में जन्म–जन्मान्तर का रिश्ता, धार्मिक संस्कार एवं अटूट बन्धन माना गया। इन्हीं धारणाओं एवं विश्वासों के फलस्वरूप वैवाहिक सम्बन्धों में किसी भी असामंजस्य परिस्थितियों को भी बिना किसी शिकायत के सहन किया गया चूँकि परम्परागत रूप में पुरूष प्रधान सामाजिक व्यवस्था थी। किन्तु समकालीन भारतीय समाज में परिवर्तन की आधुनिक प्रक्रियाओं, औद्योगिकरण, पश्चिमीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, लौकिकीकरण व भौतिकवादी विचारधारा ने महिलाओं को कार्य क्षेत्र में तो ला दिया। लेकिन नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदर्शों तथा मूल्यों में उतनी तीव्रता से परिवर्तन न होने के फलस्वरूप पारिवारिक असंगतियाँ और तनाव तथा भूमिका संघर्ष उत्पन्न हो गए, जिसका कुप्रभाव न केवल पारिवारिक सामंजस्य पर पड़ा बल्कि उनके कार्यकारी सम्बन्ध भी इससे प्रभावित हुए। अतः शोधकर्ता ने कार्यरत महिलाओं के कार्यकारी सम्बन्धों एवं पारिवारिक असंगतियों के प्रभाव को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समझाने का प्रयास किया है।*

***शब्दकोशः*** *औद्योगिकरण, पश्चिमकीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, लौकीकीकरण कामकाजी महिलाऐं, प्रस्थिति, भूमिका, भूमिका संघर्ष, भूमिका तनाव, विचलन, सामंजस्य।*

---

## प्रस्तावना

शिक्षित कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका से एक और पारिवारिक सामंजस्य विघटित हुआ है तो दूसरी ओर पारिवारिक असंगतियों के परिणामस्वरूप उनकी कार्यकारी भूमिकाएँ प्रभावित हुई हैं। अधिकांश कामकाजी महिलाऐं यह स्वीकार करती है कि उनके द्वारा नौकरी करने से पारिवारिक जीवन में तनाव उत्पन्न हुआ है और इस तनाव के परिणामस्वरूप परिवार में विभिन्न असंगतियाँ उत्पन्न हुई है और व्यवस्था/व्यस्तता के फलस्वरूप बच्चों पर अधिक ध्यान न दे पाना, पति एवं पारिवारिक सदस्यों के प्रति अधिक तन्मयता न दिखा पाना, रिश्तेदारों के लिए समय निकाल पाना एवं पारिवारिक व्यवस्था में व अधिक समय न दे पाना आदि। इन असंगतियों से न केवल पारिवारिक जीवन में तनाव उत्पन्न हुआ है, बल्कि इनका प्रभाव उनके कार्यकारी सम्बन्धों पर भी पड़ता है क्योंकि जब पारिवारिक तनाव में मन अशान्त रहता है, तो व्यवसाय सम्बन्धी भूमिकाएँ भी प्रभावित होती है। कार्यरत महिलाओं की गृहिणी व व्यवसायी की भूमिका में, माँ और व्यवसायी की भूमिका में तथा पत्नी एवं व्यवसायी की भूमिका में काफी अंशों तक भूमिका तनाव व भूमिका संघर्ष उपस्थित है।

## नौकरी के कारण

शोध के दौरान यह पाया गया कि इन महिलाओं ने केवल मात्र आर्थिक कारण से व्यवसाय को नहीं अपनाया बल्कि उच्च शिक्षा एवं अवकाश का समय सुदपयोग करने, विशेष सतर बनाये रखने, पति की आय में वृद्धि के विचार से भी इन्होंने व्यवसाय अपनाया है।

---

* शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

इनके विवाहोपरांत व्यवसाय में बने रहने का कारण भी केवल मात्र आर्थिक नहीं था बल्कि पति की स्वयं की भी इनके व्यवसाय एवं प्रगति में रूचि थी। यद्यपि कुछ महिलाओं के पति प्रारम्भ में तटस्थ पाये गये किन्तु बाद में पक्षधर हो गये एवं एक भी महिला पति के विरोध में व्यवसाय में नहीं पायी गई। इस प्रकार हम परम्परागत दृष्टिकोण में एवं महिलाओं का नौकरी में आने के बारे में दृष्टिकोण परिवर्तन पाते हैं। यही कारण है कि प्रस्तुत अध्ययन के दौरान आंकड़ों में हम पाते हैं कि विवाहित कामकाजी महिलाओं की संख्या अविवाहित महिलाओं से कहीं अधिक है।

**कामकाजी महिलाएँ दोहरी भूमिका कितनी सफलता पूर्वक निभाती है**

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि नौकरी पेशा महिलाएँ चाहे आर्थिक कारणों से नौकरी कर रही हो या स्वयं की इच्छा से, किन्तु अधिकांश महिलाएँ कर्मचारी एवं व्यवसाय की भूमिका निर्वाह में किन्हीं कारणों से कहीं न कहीं भूमिका संघर्ष अनुभव करती है किन्तु फिर भी सभी महिलाएँ पारिवारिक एवं व्यावसायिक सामंजस्य बनाये हुए हैं एवं इनके दाम्पत्य सम्बन्धों पर प्रभाव नहीं पाते हैं क्योंकि ये सभी महिलाएँ पति की सहमति से ही नौकरी करती है। अतः हम नौकरी एवं दाम्पत्य सम्बन्ध में कार्य–कारण के संबंध का अभाव पाते हैं।इस सामंजस्य का एक कारण यह भी था कि ये महिलाएँ स्वयं की इच्छा से नौकरी करती थी; दबाव स्वरूप नहीं। कुछ महिलाओं पर आर्थिक दबाव पाते हैं। अतः नौकरी के प्रति द्वेधवृत्ति के कारण इनमें भूमिका द्वन्द्व पाते हैं। इसी कारण बच्चों की देखभाल, पति की देखभाल के कारण ये चिन्तित या कभी–कभी नौकरी छोड़ने का विचार रखती हैं।

अतः दाम्पत्य संबंधों को प्रभावित करने वाले दो कारण है–

- पति का पत्नी की नौकरी के प्रति दृष्टिकोण।
- महिलाओं की नौकरी के प्रति द्वेक्षवृत्ति।

प्रस्तुत अध्ययन में दाम्पत्य सम्बन्धों में सहयोग का कारण पति का पत्नी की नौकरी के प्रति पक्ष में दृष्टिकोण हैं एवं भूमिका द्वन्द्व का कारण महिलाओं की नौकरी के प्रति द्वेधवृत्ति हैं, जो कि पारिवारिक सामंजस्य, बच्चों की देखभाल, पति की देखभाल, गृह कार्य, व्यावसायिक प्रगति के प्रति आकांक्षा विशेष स्तर से रहने की आकांक्षा, बच्चों के केरियर के प्रति आकांक्षा आदि रूप में प्रकट होती हैं।

**पारिवारिक सामंजस्य**

कार्यरत महिलाएँ एवं उनके परिवारों का स्वरूप के बारे में अनेक अध्ययनों से यह प्रमाणित हो चुका है कि परिवार जैसी महत्वपूर्ण संस्था मतें संरचनात्मक परिवर्तन आया है एवं संयुक्त परिवारों की तुलना में एकाकी परिवारों की वृद्धि हुई है।लेकिन इसका तात्पर्य कदापि यह नहीं कि एकाकी परिवार में वृद्धि एवं महिलाओं के व्यवसाय अपनाने में कार्य कारण संबंध है। इस प्रवृत्ति के लिए विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं सामयिक कारण उत्तरदायी है। यद्यपि कार्यरत महिलाओं के परिवारों में ऐसी आन्तरिक स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है जो कि एकाकी परिवारों की उत्पत्ति को प्रेरित करती है। पारिवारिक संरचना में परिवर्तन आने का अनेक कारणों में से एक कारण महिलाओं का व्यवसाय में आना अवश्य है किन्तु एक मात्र कारण नहीं। अतः इसमें कार्य कारण सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता।

- **गृह कार्य**

परिवार में परम्परागत रीति के अनुसार नारी से बहुमुखी दायित्वों की अपेक्षा की जाती है, किन्तु कामकाजी महिलाओं को अपेक्षाकृजत कम समय मिलने के कारण सभी के सहयोग की अपेक्षा रहती है अन्यथा गृह कार्य में सहयोग हेतु नौकरी रखकर इस समस्या का निदान ढूंढा जाता है। ताकि पारिवारिक सामंजस्य बना रहे। पति का सहयोग संकोचमय माना जाता है। मित्र आदि भी गृह कार्य में सहयोग को निम्न दृष्टि से देखते हैं। इसलिए कार्य को लेकर इनमें भूमिका संघर्ष अधिक है।

इसके अतिरिक्त इनको गृह कार्य में जो सहयोग मिलता है, वह लाद कर अहसान रूप में मिलता है। अब तक के सभी अध्ययन, प्रमिला कपूर, सावित्री परमार, रमा कपूर सभी ने इस बात की पुष्टि की है कि भारतीय समाज में अभी तक भी गृह कार्य को लेकर स्त्री पुरूष के कार्यों में स्पष्ट विभाजन है। पति व अन्य परिवार के सदस्य, खरीददारी, बाजार का कार्य एवं गृह खर्च में तो सहयोग करते हैं किन्तु खाना बनाने, बर्तन, कपड़े धोने आदि में सहयोग करना निम्न दृष्टि से देखा जाता है।

- **पति की देखभाल**

भारतीय नारी का पुरूष के साथ सम्बन्ध मूल्यों में पति सेवा प्रभावी आदर्श है। उसका नौकरी करना इस आदर्श की प्राप्ति में प्रमुख कारण है। अतः एक और पति की देखभाल व उत्तरदायित्व न निभा पाने का ज्ञान और दूसरी और नौकरी करना उसके मानस में भूमिका द्वन्द्व पैदा कर देता है।

रॉस ने 1961 में, प्रमिला कपूर ने 1970 एवं दूबे ने अपने अध्ययनों से स्पष्ट कर दिया कि समान व्यवसाय में होते हुए भी घर, बच्चे एवं सास/ससुर की देखभाल करना पत्नी का ही कार्य है। पति का कार्य तो केवल गृह खर्च के लिए कमाना मात्र है। यदि कोई स्त्री पति से सहयोग की अपेक्षा करती है तो उसे निम्न, तुच्छ एवं अच्छी पत्नी के रूप में नहीं देखा जाता। पत्नी का पति के लौटते ही चाय–नाश्ता कराने का धर्म है चाहे वे साथ–साथ ही लौटे हो। अतः कमला देवी ने स्त्री को "डोमेस्टिक मैट्रन" नाम दिया है।इसके अतिरिक्त वह पति के साथ बाहर घूमने आदि में भी कम समय दे पाती है। अतः उन्हें पति की पूरी देखभाल न करने के कारण प्रायः नौकरी छोड़ देने का विचार आता है। शिक्षित वर्ग भी इस मानसिक दासता से अछूता नहीं है। यद्यपि वैचारिक स्तर पर इनके पति भी उच्च शिक्षा प्राप्त होने के कारण एवं समान रूप से नौकरी करने के कारण उदारवादी है किन्तु व्यावहारिक स्तर पर वे स्वयं भी पत्नी से सेवा की अपेक्षा रखते हैं।जब ये महिलाएँ पति को गृह खर्च चलाने में आय में सहयोग करती है जो कभी–कभी इन्हें भी पुरूषों के समान सुविधाओं का विचार आता है और वहाँ संघर्ष एवं मानसिक तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है।

- **बच्चों की देखभाल**

बच्चों की उचित देखभाल के अभाव में कामकाजी महिलाओं में सर्वाधिक द्वन्द्व पाया गया। विशेषकर जब बच्चे छोटे हो एवं व्यक्तिगत देखभाल की आवश्यकता हो तथा घर में अन्य कोई सदस्य न हो। उन्हें बच्चों की नौकर या आया के संरक्षण में छोड़ना पड़े। बच्चों की उचित देखभाल के सम्बन्ध में एकाकी परिवार की महिलाएँ अधिक असंतुष्ट एवं चिन्तित पाई गई। किन्तु जिन महिलाओं के बच्चे बड़े हो गये वे अपने को अधिकतर स्वावलम्बी एवं आत्मनिर्भर ही समझते थे। कुछ ही अपने को उपेक्षणीय मानते थे। अतः बच्चों को स्वयं को माँ की नौकरी के प्रति गर्व का भाव ही था।अतः यहाँ हम आशा रानी बोहरा के सहमति पाते हैं कि– नौकरी से बच्चों में आत्मनिर्भरता एवं आत्म विश्वास की भावना पनपती है।"

बच्चों को कम समय दे पाने के कारण कुछ कामकाजी महिलाओं में एक अपराधी भावना आ गई है किन्तु साथ ही वह यह भी मानती है कि बच्चों में स्नेह जताने या अच्छी शिक्षा देने के लिए अधिक समय की जरूरत नहीं है। आप कितना समय देती हैं इसका नहीं, कैसे देती है; इसका महत्व है।" यदि ऐसा होता तो घर में रहने वालीसभी माताओं के बच्चे अधिक सुसंस्कृत एवं होशियार होते जबकि परिणाम उल्टा ही होता है।इसका स्पष्ट कारण है कि ये महिलाएँ कम समय होने पर भी बच्चों की पढ़ाई लिखाई का पूरा ध्यान रखती हैं, एवं पढ़ाती भी है एवं इनके विचार है कि अच्छे संस्कार डालने और चरित्र का विकास करने के लिए अधिक समय देना आवश्यक नहीं,कम समय का अच्छा उपयोग जानना जरूरी है।किन्तु फिर भी ये महिलाएँ बच्चों के लालन–पालन से पूर्णतया संतुष्ट नहीं है। इसका स्पष्ट कारण यह भी है कि ये महिलाएँ बच्चों के कैरियर, विकास एवं शिक्षा के प्रति अधिक सचेत है। अतः इन्हें कम समय दे पा सकने के कारण एवं छोटी आयु में बच्चों के उचित पालन–पोषण के लिए द्वन्द्व अनुभव करती है और नौकरी छोड़ने का विचार भी करती है। यही कारण है कि सभी महिलिाएँ छोटे बच्चों की देखभाल के कारण ही कभी–कभी नौकरी छोड़ने का विचार रखती है।

- **कार्यरत महिलाएँ एवं परिवार के सदस्यों की अपेक्षाएँ**

महिलाओं के व्यवसाय में रत रहने के कारण उस समय में कमी कर देता है जिससे वह परिवार के अन्य सदस्यों सास/ससुर, माता–पिता संबंधियों की अपेक्षाएँ पूरी कर सके। अतः अधिकतर महिलाओं ने यह स्वीकार किया कि वे इन लोगों से दूर होती जा रही है। अतः परिवार के लोगों एवं संबंधियों को उनसे शिकायतें रहती है। ये महिलाएँ बच्चों को पढ़ाने में कम समय दे पाने के कारण एवं पति की देख–भाल के बारे में भी स्वयं भी संतुष्ट नहीं है। ये तथ्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि यदि परिवार में पति एवं बच्चों की उचित देखभाल नहीं होती तो इन कार्यरत महिलाओं से भी अधिक शिकायतें होगी।

- **कार्यरत महिलाएँ एवं स्वयं की अपेक्षाऐं**

सबसे अधिक द्वन्द्व उस समय होता है जब वे अपनी योग्यता नहीं बढ़ा पाती और अपने सहयोगियों से केवल मात्र इसलिए कनिष्ठ हो जाती है क्योंकि उसकी पारिवारिक स्थितियाँ व्यावसायिक प्रगति में बाधक है। छोटे बच्चे, पति की देखभाल, घर की देखभाल, उसकी आगे की पढ़ाई एवं प्रगति में दीवार बन कर खड़े हो जाते हैं और उसका व्यक्तित्व कुंठित हो जाता है या पति के ट्रांसफर के कारण उसे अलग अकेला रहना पड़ता है। वहाँ नौकरी एवं परिवार में सर्वाधिक द्वन्द्व देखा गया है।

इसी प्रकार से इन महिलाओं में एक विशेष स्तर के प्रति भी अधिक सजगता पाते हैं। अतः जब वे अपनी आकांक्षाऐं पूरी नहीं कर पाती तो भी हीन, अनुभव करती है। इस प्रकार का संघर्ष एक साधारण गृहिणी में नहीं पाया जाता। क्योंकि उसका जीवन स्तर केवल मात्र पति की आय व पद पर निर्भर करता है। उसकी अपनी कोई अलग से समाज में स्थिति नहीं होती जबकि एक कार्यशील महिला की समाज एवं व्यवसाय में अपनी एक निजी स्थिति होती है। अतः उसे अपना एक विशेष स्तर रखना पड़ता है। ऐसा नकर पाने की स्थिति में वह मानसिक तनाव अनुभव करती है। इसमें संयुक्त परिवार प्रथा को भी एक बाधा के रूप में पाते हैं।

**व्यावसायिक सामंजस्य**

- **कार्यरत महिलाएँ एवं उच्चाधिकारी, सहकर्मी एवं अधीनस्थ कर्मचारी**

कार्यरत महिलाओं को कुछ अधिकारियों एवं सहयोगी तथा अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ काम करना पड़ता है। अतः जब ये अधिकारी एवं सहयोगी तथा अधीनस्थ लोग पूर्वाग्रहों से युक्त होते हैं तो इन महिलाओं को काफी तनाव होता है। यदि ये सहयोगी होते हैं तो इनका सामंजस्य कार्यकुशलता को बढ़ा देता है।शैक्षणिक वर्ग की महिलाएँ अपने हैड/प्राचार्य के प्रति उत्तरदायी होती है। इनका अधिनस्थ कर्मचारियों से कम सम्पर्क होता है एवं सहयोगी प्रायः इनके मित्र वर्ग में आते हैं। इनके उच्च अधिकारी भी प्रत्यक्षतः संबंधित कम होते है। इनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध विद्यार्थी एवं उनके परिणामों तथा कक्षा में पढ़ाई से होता है। समकक्षी यद्यपि मन ही मन ईर्ष्या भाव रखते हैं किन्तु सभी अपनी–अपनी कक्षा के पाठ्यक्रम से संबंधित होते हैं, अतः स्वतंत्र होते हैं। इसलिए इनमें इस प्रकार का द्वन्द्व भी प्रत्यक्षतः नहीं होता।

सर्वाधिक मानसिक तनाव उस समय पाया जाता है जब अधीनस्थ कर्मचारी पुरूष होते हैं और वे इनसे असहयोगी व्यवहार करते हैं। क्योंकि पुरूष वर्ग का अहं स्त्री के अधीन काम करने से हीनता अनुभव करता है। अतः ये लोग सर्वाधिक मानसिक तनाव के लिए उत्तरदायी पाये गये।इस प्रकार पुरूष वर्ग की मनोवृत्ति एवं इन महिलाओं के साथ इनका सम्बन्ध संघर्ष का परिचायक हैं।

**कार्यरत महिलाओं का दौहरा व्यक्तित्व**

कार्यरत महिलाओं से यह प्रश्न किये जाने पर कि क्या परिवार एवं कार्यालय की दोहरी भूमिकाएँ निभाने से उनके अन्दर संघर्ष की भावना उत्पन्न होती है। महिलाओं ने यह संघर्ष स्वीकार किया। इस प्रकार के संघर्ष असामंजस्य का द्योतक है। इसका सर्वप्रमुख कारण परिवार एवं समाज के सदस्यों का कार्यरत महिलाओं के समक्ष उत्पन्न समस्याओं का न समझा पाना है। प्राप्त आंकड़ों से सिद्ध होता है कि उन्हीं महिलाओं के समक्ष दोहरे उत्तरदायित्व का संघर्ष अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है जिन्हें अतिरिक्त घर का भी पूरा उत्तरदायित्व

संभालना पड़ता है एवं जिनकी नौकरी के प्रति द्वैधवृत्ति है। जो परिवार एवं व्यवसाय दोनों में पूरी निष्ठा चाहती है एवं महात्वाकांक्षी हैं। यद्यपि गृह कार्यो के लिए इन महिलाओं ने नौकर की व्यवस्था कर रखी है फिर भी ये नौकरों से उत्पीड़ित है, जिनके बच्चे छोटे हैं। क्योंकि ये आँकड़े स्पष्ट करते हैं– जितनी अधिक मात्रा में दोहरे उत्तरदायित्व होंगें उतनी ही अधिक संघर्ष में वृद्धि होगी। भारतीय परिप्रेक्ष्य में पली ये भारतीय महिलाएँ कानूनी तौर पर समानता का दर्जा रखती है किन्तु इनकी मनोवृत्ति अभी भी परम्परागत हैं– पति सेवा इनका धर्म हैं एवं बच्चों को पालना कर्तव्य। अतः अधिकांश महिलाएँ, अभी भी कैरियर के प्रति उदासीन है एवं मानसिक कैद से ग्रस्त होने के कारण स्वयं ही महिला संगठनों एवं व्यावसायिक संगठनों के प्रति उदासीन है।इन महिलाओं से जब यह पूछा गया कि वे क्या सुझाव एवं समाधान हो सकते हैं जो इस भूमिका संघर्ष को समाप्त या कम कर सके तो निम्न सुझाव पाये गये–

- प्रथम सुझाव मनोवृत्ति के स्तर पर परिवर्तन की आवश्यकता है। कामकाजी महिलाओं को समाज में उच्च दृष्टि से देखा जाना चाहिए एवं उनके पुरूष वर्ग के साथ काम करने के बारे में अश्लील, भद्दी बातें नहीं करनी चाहिए। पुरूष वर्ग को पूर्वाग्रहों से मुक्त हो उसे एक कर्मचारी के रूप में देखना चाहिए। इस विषय में डॉ. योगेन्द्र सिंह नेअध्ययन में पाया कि स्त्रियाँ पुरूषों की तुलना में अधिक आधुनिक हैं। स्त्रियाँ आधुनिक विचारों को ग्रहण करने में अधिक संवेदनशील हैं।

अतः पुरूष वर्ग को परिवर्तनशील स्थिति के अनुरूप गृह कार्यों आदि में बराबर का सहयोग करना चाहिए तथा उत्तरदायित्व की भावना समान रूप से होनी चाहिए। श्रीमती कपूर, विमला भटनागर ने भी इस प्रकार के सुझाव साक्षात्कार के दौरान पाये थे। प्रमिला कपूर ने मनोवृत्ति बदलने की जरूरत पर जोर देते हुए लिखा है, घरेलू कामकाज के बारे में पति–पत्नी के बीच एक संयुक्त जिम्मेदारी की भावना और इन कार्यो को दोनों के लिए गरिमायुक्त और सम्माननीय समझने की भावना घर में शुरू से ही केवल उपदेश रूप में नहीं बल्कि व्यवहार रूप में विकसित की जानी चाहिए।

- स्त्री को नीरस और घिसे पिटे घरेलू कामों से छुटकारा के लिए श्रम बचाने वाले ऐसे तरीके होने चाहिए ताकि उसे कम से कम श्रम व शक्ति लगाना पड़े। जैसे साफ–लथरी लॉण्ड्री की व्यवस्था, स्वच्छ होटल व रेस्टोरेन्ट कॉमन किचन, अल्प समय नौकरों की व्यवस्था आदि। ताकि समयाभाव में इन एजेन्सीज का लाभ ले सके एवं अवकाश के क्षण आराम कर सके।

यदि समाज चाहता है कि स्त्रियाँ कर्मचारी और पत्नियाँ एवं माताओं के रूप में अधिक निपुणता से एवं संतोषजनक काम करे तो स्त्रियों को छोटे बच्चों के समय ज्यादा उदारता पूर्वक वेतन की छुट्टियाँ देनी चाहिए तथा कार्यालय में थोड़ी देर थकानदूर करने के लिए आराम कक्ष एवंसमय दिया जाना चाहिए ताकि उनका स्वास्थ्य भी ठीक रहे एवं वे कम समय में ही अधिक कुशलता से कार्य कर सके। 50 प्रतिशत महिलाओं का कहना था कि छोटे बच्चों के समय उन्हें नौकरी की सुरक्षादेनी चाहिए ताकि वे अवैतनिक अवकाश लेकर बच्चों की समुचित देख–रेख कर सकें। अन्यथा वे व्यावसायिक असुरक्षा में छोटे एवं बीमार बच्चों को भी छोड़कर नौकरी पर जाती हैं जिससे मानसिक चिन्ता रहती है एवं एक और बच्चा अपनेको उपेक्षणीय समझता है वहाँ 'माँ' भी मानसिक तनाव से युक्त रहती हैं जो कार्यक्षमता कम करता है। अतः माँ एवं बच्चों के व्यक्तित्व विकास के लिए स्त्रियों को व्यवसाय चुनने एवं छोड़ने के पर्याप्त अवसर होने चाहिए ताकि वे पति के ट्रांसफर, बच्चों की बीमारी व छोटे होने की अवस्था में नौकरी छोड़ निश्चिंत रह सके एवं अनुकूल स्थिति होने पर पुनः नौकरी कर सके।इसके अतिरिक्त महिलाऐं जिनके पति बाहर कार्यरत है उन्होंने पति–पत्नी के एक जगह सेवारत होने के कानून का कड़ाई से पालन करने का सुझाव दिया। महिलाओं ने अभिभावक छुट्टियों का प्रावधान का सुझाव दिया ताकि पति–पत्नि दोनों ही बारी–बारी से छुट्टियाँ लेकर बच्चे की देखभाल कर सके। इससे संयुक्त उत्तरदायित्व की भावना स्वतः ही आ जायेगी। शोध के दौरान यह भी सुझाव आया कि कामकाजी स्त्रियों के प्रति समाज में स्थान, घर और कार्यालय में स्त्रियों–पुरूषों एवं समाज की मनोवृत्तियों के समाजीकरण की प्रक्रिया, शिक्षा प्रणाली और प्रभावकारी जन–सूचना के माध्यमों से बदलने की जरूरत हैं। नौकरी के प्रति स्त्रियों की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन लाने चाहिए। इसी प्रकार के विचार हम अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट[1] में पाते हैं–

स्त्रियों को वास्तव में शिक्षा, प्रशिक्षण, नौकरी सुरक्षा और कार्य के क्षेत्र में यदि आगे उन्नति के अवसर समान रूप से प्रदान किये जाये और यदि उन्हें अपने दोनों कार्यों– कर्मचारी के रूप में और पत्नी व माता के रूप में– अपने कर्तव्यों का बिना एक भूमिका का दूसरी भूमिका को प्रभावित किये हुए एक साथऔर प्रभावशाली ढंग से पालनकरने की सुविधाएँ प्रदान की जाये तो स्त्रियाँ कहीं ज्यादा बड़ा योगदान कर सकती हैं।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि प्राध्यापिकाओं की आर्थिक एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठा अधिक मान्य होने पर भी वे कई बार भूमिकाओं में सामंजस्य नहीं कर पाती हैं; जबकि यह व्यक्तिगत भिन्नता एवं परिस्थिति पर निर्भर है। यद्यपि इस भूमिका द्वन्द्व के कुछ सामान्य कारण हैं। इसका एक पभावी कारण भारतीय परम्परागत कार्य विभाजन एवं दृष्टिकोण भी है।

यद्यपि अब परिस्थिति स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बदल गई है एवं पिछले दशक में तीव्र गति से इन महिलाओं की संख्या में वृद्धि हुई है एवं सरकार ने भी इनकी समस्याओं पर ध्यान दिया है।

इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो गया कि ये स्त्रियाँ आर्थिक कारण से ही रोजगार शुदा जीवन नहीं अपनाती अपितु शिक्षा के उपयोग, अतिरिक्त समय का उपयोग एवं इच्छित सामाजिक स्थिति प्राप्त करने को भी नौकरी करती है। अतः इनके समक्ष आर्थिक द्वन्द्व इतना प्रबल नहीं है जितना समग्राभाव का; तथा ये स्त्रियाँ अपनी स्थिति समाज में उच्च एवं आदरणीय मानती हैं, एवं इन लोगों के मन में बच्चों की देखभाल सम्बन्धी अपराधी भावना भी दूर होने लगी है। वे सोचती हैं कि हम बच्चों के लिए जो कुछ कर पाती हैं, वह सामान्य घरेलू माताएँ नहीं कर पाती, क्योंकि हमारे पास बच्चों की सुख सुविधा, अच्छी शिक्षा व्यवस्था, और अधिक साधन भी होते हैं जो कि हम घर में रहकर शायद न जुटा पाती। अतः आशा रानी व्होरा के शब्दों में हम कह सकते हैं कि कामकाजी स्त्रियों को टाईप राइटर के की बोर्ड में बच्चों के चेहरे, टेलीफोन के चौंगें में 'माँ' 'माँ' की आवाज सुनाई देती है। फाईलों के पन्नों में उनकी भौली स्मृतियों के चित्र नजर आते हैं और इन सबमें खोई–खोई वे गलतियाँ करने लगती हैं– अतिशयोक्ति है।इस प्रकार स्पष्ट है कि यद्यपि इन महिलाओं में भूमिका संघर्ष है किन्तु वह असामंजस्य की सीमा तक नहीं है। तीव्र गति से बढ़ती हुई विवाहित कामकाजी महिलाओं की संख्या इस तथ्य की पुष्टि के लिए पर्याप्त है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. अल्टेकर, ए.एस : दॉ पॉजिशन ऑफ वुमन इन हिन्दू सिविलाईजेशन, मोतीलाल बनारसीदार, दिल्ली, 1962
2. आशारानी वोहरा : भारतीय नारीः अस्मिता और अधिकार, प्रथम संस्करण, 1986
3. डी.पी. मुखर्जी : सोसियोलॉजी ऑफ इण्डियन कल्चर, रावत, जयपुर, 1079
4. कपूर, प्रमिला : भारत में विवाह एवं कामकाजी महिलाऐं, विकास पब्लिकेशन्स, 1970
5. योगेन्द्र सिंहः मॉडर्नाईजेशन ऑफ इण्डिया ट्रेडिशन, न्यू दिल्ली, थॉम्सन प्रेस लि0, 1973
6. रावत, हरिकृष्ण : समाजशास्त्र शब्द कोश, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2014
7. शर्मा, जी.एल. : सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2015
8. सिंह, वी.एन. : आधुनिकता एवं नारी सशक्तिकरण, रावत पब्लिकेशन्स, 2010
9. दुर्खीम, इमाइल : द डिविजन ऑफ लेर इन सोसायटी, न्ययॉर्कः द फ्री, 1956
10. माथुर, दीपा : वुमन, फैमिली एण्ड वर्क, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1992
11. मोदी, ईश्वर : जेन्डर आइडेन्टीटीज एण्ड मल्टीपल मार्जिनलटीज, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2012


❖◆❖